प्रथम अध्याय

परिवार : स्वरूप, व्युत्पत्यर्थ, परिभाषा और महत्त्व –

प्रथम अध्याय

परिवार : स्वरुप, व्युत्पत्यर्थ, परिभाषा और महत्व --

परिवार : (स्वरुप)

परिवार समाज की महत्वपूर्ण संस्था है। परिवार में ही मानव के आत्म-संरक्षण, वंश-वर्धन और जातिय विकास होता है। परिवार के बिना मनुष्य मनुष्य ही नहीं है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी मानव के शरीर एवं मन का वह अविभाज्य हिस्सा है। मानव में पारिवारिक वृत्ति जन्मजात होती है। अनेक प्रेरकों, आवश्यकताओं, क्रियाओं के फलस्वरुप मानव प्रजाति ने अत्यन्त सुन्दर सामाजिक, विश्वासों, रीति - रिवाजों, विचारों और संस्थाओं का निर्माण किया है, ऐसी संस्था में सबसे पुरानी संस्था ` परिवार ` है। परिवार यह एक सार्वभौमिक संस्था है। परिवर्तित परिस्थितियों में देश एवं कालानुसार इसका विभिन्न रुप दिखाई देता है।

भारतीय संस्कृति में परिवार के इसी विशद दृष्टिकोण को लक्षित करते हुए कहा है ` वसुधैवकुटुम्बकम् ` की भावना को प्रश्रय दिया गया है। पारिवारिक भावना का साहित्य संसार से घनिष्ट सम्बन्ध है साथ ही उसे विश्व में भी अत्यधिक महत्व का स्थान दिया गया है ` परिवार विश्व की परम्परागत सार्वकालिक, सर्वजनिन, आधारभूत, बहुउद्देश्यपूर्ण, सामाजिक संस्था है, जो हर भू भाग में प्रचलित है। परिवार व्यक्ति के व्यक्तित्व से अनिवार्यत: सम्बध्द है। परिवार में ही व्यक्ति के सामाजिक सम्बन्धों का विकास होता है, अत: यह कहने में कोई अत्युक्ति न होगी कि परिवार व्यक्ति को सामाजिक जीवन के लिए तैयार करता है।[१] ` दूसरे शब्दों में

---

१ डॉ. रक्षापुरा , ` प्रेमचंद - साहित्य में व्यक्ति और समाज ` - - पृ. सं. १४.

परिवार ही व्यक्ति का पारिवारिकरण करता है और संभवत: यही प्रमुख कारण है कि परिवार आज एक सामान्य सामाजिक इकाई है और किसी न किसी रुप में यह सांस्कृतिक विकास के सभी स्तरोंपर पाई जाती है। समय समयपर पारिवारिक समूह बदलता है और विभिन्न समाजों में विभिन्न कालों और स्थानों पर इसके विभिन्न रूप देखे गये हैं `[२] प्राय: प्रत्येक मानव परिवार में ही जन्म लेता है। परिवार में ही व्यक्ति के सामाजिक - सम्बन्धोंका विकास होता है, याने परिवार व्यक्ति को विस्तृत सामाजिक जीवन के लिए तैयार करता है। आगे चलकर राष्ट्र के उत्थान और पतन में परिवार एवं समाज की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उसके स्वरुप के अनुसार ही राष्ट्र की ` इमेज ` निर्मित होती है। सही अर्थो में परिवार एवं समाज ही राष्ट्र की रीढ है। जिस प्रकार मानव की समस्त सामाजिक संरचना रीढपर ही अवस्थित होती है, उसी प्रकार राष्ट्र की भव्यतम इमारत भी परिवार एवं समाज की सुदृढ जीवपर आधारित होती है। इनका ही समुचित रुप ` राष्ट्र ` कहालाया जाता है। इतना परिवार का महत्व व्यापक है। इसका मतलब यह है कि परिवार, समाज, राष्ट्र परस्पर एक - दूसरे के पूरक है। इसलिए पारिवारिक भावना का साहित्य - संसार से घनिष्ट सम्बन्ध है। विशेषत: उपन्यास साहित्य से उसका घनिष्टतम सम्बन्ध है, क्यों कि उपन्यास जीवन और जगत की विविध समस्याओं का दिग्दर्शन कराने में सबसे समर्थ साधन है। इसलिए हिन्दी उपन्यास साहित्य पारिवारिक चित्रण की दृष्टिसे अत्यन्त समृध्द सिध्द होता है। यह साहित्य मूलत: पारिवारिक समस्याओंसे ही प्रणोदित हुआ है। पूरे विश्व में ` परिवार ` संस्था दिखाई देती है। इन परिवारों से सम्बन्धित पाश्चात्य और भारतीय धारणाओं को देखना जरुरी है।

---

२ डी.एन.मजूमदार - ` भारतीय संस्कृति के उपादान ` - पृ.सं.४८

भारतीय - अवधारणाएँ --

परिवार के प्रति भारतीय दृष्टिकोण अत्यन्त ही गंम्भीर रहा है। वस्तुत: देखा जाए तो परिवार नामक संस्था का उद्गम ही मानवीय मौलिक माँग सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं का प्रतिफलन है। पुरुष को रति-सुख हेतु, स्त्री की आवश्यकता, तदुनंतर विवाह का अटूट-बन्धन और संतान की एषणा आदि परिवार के जन्मदाता है। आगे चलकर परिवार पारिवारिक - सामाजिक - धार्मिक कार्यों के सम्पन्न होने में, लाभकारी सिध्द होने लगा और शनै: शनै: परिवार के कार्यक्षेत्र में समस्त मानवीय क्रिया - कलाप सिमटने लगे। परिणामत: परिवार समाज की एक महत्वपूर्ण संस्था के रुप में स्वीकृत हो गयी। जीवन में कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जिन्हें दूसरों के सहयोग के बिना पूर्ण करना कठिण ही नहीं - असम्भव है - जैसे कामवासना की पूर्ति कर संतुष्टि पाता है, तो एक नई समस्या उसके सामने उत्पन्न होती है। वह समस्या है `सन्तानोत्पत्ति की समस्या`। सन्तान का किसप्रकार प्रकार पालन-पोषण हो, किस प्रकार उसकी सुरक्षा हो, इन सभी प्रारम्भिक, किन्तु महत्वपूर्ण, सहज-स्वाभाविक समस्याओं के लिए ही परिवार का जन्म हुआ है।`[३] और` तदुनंतर यह पारिवारिक प्रक्रिया भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग बन गई है, क्यों कि भारतीय संस्कृति देशकाल की सीमा में बंधी हुई एक विशेष संस्कृति है, जिसका उद्भव और विकास मानव संस्कृति की पृष्ठभूमि में हुआ है[४]।`

---

३ डॉ.कैलाशचन्द जैन -` प्राचीन भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक संस्थाएँ` - पृ.सं.१०६

४ डी.एन. मंजूमदार -` भारतीय संस्कृति के उत्पादान - पृ.सं.५१

भारतीय चिन्तक हरिदत्त वेदालंकार ने अपने प्रसिध्द ग्रंथ `हिन्दू-परिवार मीमांसा` में `परिवार` नामक संस्था के संदर्भ में, भारतीय - अवधारणाओं का प्रतिनिधित्व-सा करते हुए लिखा है --` परिवार मानव जाति में आत्म-संरक्षण, वंश-वर्ध्दन और जातीय जीवन के सातत्य को बनाये रखने का प्रधान साधन है। मनुष्य मरण-धर्मा है, किन्तु मानव - जाति अमर है। व्यक्ति उत्पन्न होते है, बचपन, यौवन और बुढापे की अवस्था भोगकर समाप्त हो जाते है, किन्तु वंश-परम्पराव्दारा उनका संतानक्रम अविच्छिन्न रुपसे चलता रहता है। मृत्यु और अमरत्व दो विरोधी वस्तुएँ है, किन्तु परिवार - व्दारा इन दोनों का समन्वय हुआ है। व्यक्ति भले ही मर जावें, पर परिवार और विवाह व्दारा मानव जाति अमर हो गयी है।`[५] प्रसिध्द समाजशास्त्री रवीद्रनाथ मुकर्जी परिवार की प्राचीनता के बारे में विचार करते हुए कहते हैं कि` ऋग्वैदि काल से ही सामाजिक जीवन की एक आधारभूत इकाई के रुप में परिवार के महत्व को भारतवासियों ने स्वीकार किया है। पति-पत्नी के अतिरिक्त परिवार में माता-पिता,भ्राता - भगिनी पुत्र-पुत्री-बहु व अन्य रिश्तेदार भी रहते है `[६] ।

परिवार भारतीय समाज का प्राण है। प्रख्यात समाजशास्त्री डॉ. कैलाशचंद्र जैन के कथनानुसार -- परिवार का सामाजिक - संगठनों में एक विशिष्ट स्थान है।` व्यक्तिका समाज के विकास और उत्थान में बडा योगदान रहा है। जन्म के समय मनुष्य सामाजिक प्राणी के रुपमें नहीं रहता। उसको सुसंस्कृत बनाने में परिवार सबसे पहली तथा महत्वपूर्ण संस्था है। पति, पत्नी, माता, पुत्र, पिता ,पुत्री और भाई- बहिन इसके सदस्य होते हैं, जिनमें एक सांस्कृतिक - भावना पायी जाती है।`[७]

---

५ हरिदत्त वेदालंकार -` हिन्दु परिवार मीमांसा ,पृ.सं.४७

६ रवीद्रनाथ मुकर्जी -` भारतीय सामाजिक व्यवस्था, पृ.सं. १०

७ डॉ.कैलाशचन्द्र जैन - प्राचीन भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक संस्थाएँ - पृ.सं.१०६

भारतीय समाज में परिवार एक समूह के रुप में कार्य करता है, जो एक ही घर में रहता है। परिवार के सदस्य पारिवारिक - भावना के स्तर पर एक दूसरे से सम्बध्द होते हैं और उनकी रुचियाँ, विचार व्यवहार आदि में समानता पाई जाती है। प्रसिध्द समाजशास्त्री डी.एन. मजूमदार ने भारतीय अवधारणाओं के परिप्रेक्ष्य में परिवार की बहुत ही सुन्दर व्याख्या दी है। कुंवरसिंह तिलरन के कथनानुसार वात्सल्य, प्रेम तथा स्नेह ऐसे मानसिक उव्देग है, जिनसे परिवार का सम्बध्द होता है। पति-पत्नी का स्वाभाविक प्रेम, बच्चों के प्रति वात्सल्य भावना स्वाभाविक है। परिवार एक ऐसा संगठन है जो पूर्ण रुपेन भावनाओंपर आधारित है। अतएव उसके सदस्य एक दूसरे के प्रति आत्मत्याग की भावना से प्रेरित रहते है। माता - पिता अपने बच्चों के भविष्य के लिए दु:खों को त्याग ने में संकोच नहीं करते। परिवार से ही मनुष्य के मूल-व्यक्तित्व चरित्र, संस्कार आदिका निर्णायक है। सामाजिक रीति-रिवाज-प्रथाएँ, परम्परायें सिखाने तथा शिक्षा देने में परिवार का महत्वपूर्ण स्थान है।

` समाजशास्त्रियों व्दारा परिवार का वर्गीकरण विभिन्न प्रकार से किया गया है। यथा पितृमूलक-मातृमूलक परिवार, एक विवाह - बहुविवाह- बहु-पति परिवार न्यूस्टिक-संयुक्त परिवार ` [८]।

भारतीय समाज में प्रारंभ से ही पितृमूलक संयुक्त परिवार - प्रणाली की परम्परा का प्रचलन रहा है।

प्रख्यात समाजशास्त्री कुंवरसिंह तिलारन के अनुसार ` परिवार को

---

८ डॉ. राजेंद्र कुमार शर्मा - प्रेमचन्द - परम्परा की कहानियों में पारिवारिक एवं सामाजिक चित्रण - पृ.सं.६२

मोटे तौर पर दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। एक विस्तृत परिवार माता - पिता, पुत्र - बहु और उनके बच्चों तक सीमित है। दो - संयुक्त परिवार में पति-पत्नी, भाई- भाई की पत्नी, उनके बच्चों को भी शामिल किया जाता है।' [९]

' पूर्व वैदिक युग में पितृ-प्रधान संयुक्त - परिवार प्रणाली थी। इस परिवार के सदस्य पुत्र, पौत्रादि और पितृ-बंधु पिता के संरक्षण में रहते थे' [१०]।

' संयुक्त परिवार प्रणाली हिन्दू समाज की एक विशेष देन है। इसमें रक्तपरिवार तथा मूलभूत परिवार के अतिरिक्त अन्य सम्बन्धी भी रहते है। साधारणतया एक परिवार में तीन या चार पीढियों के व्यक्ति एक - साथ रहते है। परिवार के सब सदस्यों में आयुमें जो सबसे बडा होता है वही परिवार का स्वामी होता है। अन्य सभी सदस्यों को उससे आदेश का पालन करना पडता है। परिवार का सब प्रबन्ध वही करता है। सामान्यतया उसकी पत्नी सब स्त्रियों पर अपना नियंत्रण रखती है। परिवार के जो पुरुष कार्य करने योग्य होते हैं, वे धनोपार्जन करते हैं और जो कुछ धन वे लाते हैं, उसे परिवार के स्वामी को देते है। उसके बाद परिवार के स्वामी का यह, कर्तव्य होता है कि वह उन व्यक्तियों को उनके व्यय करने के लिए कुछ धन दे दें। इस प्रकार गृह-स्वामी और गृह-स्वामिनी को अधिकार प्राप्त होते हैं। अन्य पुरुषों और स्त्रियों के केवल कर्तव्य हैं, अधिकार नहीं '[११]।

---

९ कुंवरसिंह तिलारन - सामाजिक तथा सांस्कृतिक मानवशास्त्र - पृ.सं.७९

१० केलाशचन्द्र जैन - प्राचीन भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक संस्थाएँ - पृ.सं.१०७

११ प्रो.पी.डी.पाठक - सामाजिक समस्याएँ - पृ.सं.१३२

पारम्परिक भारतीय संयुक्त - परिवार प्रणाली में विघटन के जो कारण आये है, वह इस प्रकार है -- औद्योगिकरण, यातायात के साधनो में उन्नति ,जनसंख्या का अधिक्य, नागरीकरण और मकानों की समस्या, निर्धनता,पाश्चात्य संस्कृति और शिक्षा, व्यक्तिवाद, महिला जागृति और आन्दोलन कलह,विवाद,झगडे, नारी - शिक्षा,कानून एवं नौकरी व्यापार आदि से सम्बन्धित अन्य कारण । इसके बावजूद भी भारतीय संयुक्त परिवार प्रणाली में भारत की आस्था विश्वास, सम्भावनाएँ अक्षुण्ण है।

पाश्चात्य अवधारणाएँ --

परिवार, विश्व की सर्वदेशीय, सर्वकालिक ,सर्वजनिन संस्था होते हुए भी पाश्चात्य-अवधारणाएँ इसके सन्दर्भ में भारतीय अवधारणाओं से बहुत कुछ भिन्न है। भारतीय परिवार जहाँ धर्म, अध्यात्म और आत्मिक सुख सन्तोष पर आधारित है, वहाँ पाश्चात्य परिवार भौतिक सुखों, व्यक्तिवाद को ही अधिक महत्व देता है, जिसे पाश्चात्य संस्कृति शिक्षा,परिस्थितियों वातावरण,सम्बन्ध आदि के अनुकूल ही कहा जाऐ तो अत्युक्ति नहीं है। पाश्चात्य परिवार में यौन सम्बन्धों, सीमित सदस्यों,बच्चे सहित था रहित आदि तथ्यों को ही महत्व दिया जाता है। पारिवारिक सदस्यों की सीमा पर्याप्त रुपसे सीमित रखती है। पाश्चात्य-परिवार बच्चों की उत्पत्ति और उसके पालन पोषणपर बल देता है, लेकिन विवाह जैसे पवित्र बन्धन का उसपर प्रतिबंध नहीं है। वे संयुक्त परिवार को एक जाइन्ट स्टाक कम्पनी मानते है --` संयुक्त परिवार ज्वाइन्ट स्टाक कम्पनी के समान एक सहकारी संस्था है `१२` वे लोग परिवार का तात्पर्य केवल पति-पत्नी और उनके बच्चों से लेते है।` १३

---

१२ महेंद्रकुमार जैन - हिन्दी उपन्यासोंमें पारिवारिक चित्रण - - पृ.सं.५

१३ प्रो.पी.डी.पाठक - सामाजिक समस्याएँ - पृ.सं.३८

भारतीय लोगों की तथा पाश्चात्य लोगों की परिवार-परिवार सम्बन्धी भावनाएँ अलग है। भारतीय संस्कृति में परिवार को जितना महत्व दिया जाता है, उतना पाश्चात्य संस्कृति में नहीं दिया जाता। भारत में परिवार मानवीय विकास का विद्यालय माना जाता है। परिवार के सदस्य एक दूसरे के प्रति श्रध्दा, सम्मान, सहयोग, सद्भावना कर्तव्य-बोध आत्मनियंत्रण, उत्तरदायित्व-भावना, प्रेम स्नेह, मोह, ममता, वात्सल्य, त्याग, सहिष्णुता, उदारता मय, सुरक्षा आदि विशिष्ट-गुणों को समय, सदस्य और आवश्यकता के अनुसार वहन करनेवाली शक्ति या अनुभूति या भावना पारिवारिक-भावना के नामसे अभिहित होती है, जिसपर 'परिवार' नामक चिरंतन स्थायी, भव्य इमारत की प्रतिस्थापना होती है।

परिवार का उद्गम --

परिवार के उद्गम के विषय में विद्वानों में बडा मतभेद है। परिवार मानव समाज की अतिप्राचीन संस्था है। प्रत्येक युग में निम्नस्तर से लेकर उच्च स्तरतक के सभी प्रकार के मानव समाजों में परिवार किसी न किसी रुप में विद्यमान है। परिवार के उत्पत्ति के सम्बन्ध में विविध सिध्दान्त प्रचलित है --

(१) कामचार का सिध्दान्त --

प्राचीन भारतीय आचार्यों की मान्यता है कि परिवार का उद्गम कामचार से हुआ है। मत्स्य न्याय के अनुसार समाज संगठन के पूर्व अराजकता की स्थिति थी, जिनमें यौन स्वतंत्रता, स्त्री-पुरुषों का स्वच्छन्द संभोग प्रचलित था। इसके अन्तर्गत स्वच्छन्द विवाह और गणविवाह भी मान्य थे। कामचार के बाद नियमबध्द विवाहों का जन्म हुआ। वहीं से परिवार का उद्गम माना जाता है।

(२) पाश्चात्य सिध्दान्त --

परिवार के उत्पत्ति के सम्बन्ध में सर्वप्रथम प्लेटो तथा अरस्तु ने पितृसत्तात्मकता के सिध्दान्त को प्रतिपादित किया है।

(३) विकासवादी सिध्दान्त --

बेकोफन ने विकासवादी सिध्दान्त का प्रतिपादन करते हुए स्पष्ट किया कि परिवार एक निश्चित क्रम से विकसित हुआ है। पहले मातृसत्ता को महत्व दिया गया और बाद में पिता के महत्व जानने के बाद पितृसत्ताक पद्धति का अवलंब किया जाने लगा।

अत: परिवार के उत्पत्ति के अनेक कारण रहे हैं। मनुष्य की आवश्यकताओं ने परिवार को जन्म दिया। प्रथमत: मानव कम से कम प्रतिव्दन्दिता रखते हुए अपनी यौन भावना को संतुष्ट करना चाहता था और इसकी पूर्ति केवल परिवार व्दारा ही हो सकती थी। दूसरा कारण सन्तानोत्पत्ति की इच्छा का रहा है। सन्तानोत्पत्ति बिना स्त्री-पुरुष के सहयोग और गठ-बन्धन के संभव नहीं थी। मानव सन्तानोत्पत्ति व्दारा अपने आपको अमर बनाना चाहता है। इस इच्छा की पूर्ति भी परिवार से ही हो सकती है। परिवार की उत्पत्ति प्रत्येक समाज में एकही तरह से और एकही कारण से नहीं हुई है। यौन तथा भूख की तृप्ति के लिए, सन्तानोत्पत्ति की स्वाभाविक प्रवृत्ति के लिए और आर्थिक सुरक्षा के लिए परिवार नामक एक संगठन की आवश्यकता प्रत्येक समाज के सदस्यों ने अनुभव की होगी जिसका स्वाभाविक परिणाम है -- परिवार की उत्पत्ति[१४]। अन्त में

---

१४ रवीन्द्र मुकर्जी - सामाजिक मानवशास्त्र की रुपरेखा -- पृ.सं.२७५

सन्तान के पालन-पोषण अधिकार, कर्तव्य, आर्थिक व्यवस्था आदि ने मिलकर परिवार की उत्पत्ति में सहयोग प्रदान किया है।

परिवार की उत्पत्ति क्यों हो गई ? परिवार याने क्या ? परिवारविषयक धारणाएँ कौनकौनसी है ? यह हमने देखा। अब परिवार शब्द की व्युत्पत्ति के संस्कृत, हिन्दी तथा अँग्रेजी में कौनकौनसी परिभाषाएँ यह देखें ---

१) व्युत्पत्यर्थ
२) परिभाषाएँ

संस्कृत

(१) `परिवार` शब्द संस्कृत के परि उपसर्ग वृ धातु में घञ् प्रत्यय के योग से बना हुआ है। संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ में `परिव्रियते अनेन इति परिवार:` सूत्र प्राप्त होता है।[१५]

(२) `वाचस्पत्यम् कोश` में परिवार शब्द भी मिलता है जिसकी व्याख्या इस प्रकार है -- `परित: वारयति इति परिवार:`[१६]
अर्थात् निकटतम संबंधियों से घिरी हुई संस्था परिवार है।

(३) `आप्टे कोश` में भी इसे `घनिष्टतम बंधु - बांधवों का संगठन कहा गया है`[१७]

---

१५ चतुर्वेदी, द्वारका प्रसाद, संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, १९५७

१६ चौखंभा संस्कृत सीरीज, वाचस्पत्यम्, पंचम भाग - १९६२

१७ आप्टे कोश --

(४) ` हिन्दी विश्वकोश ` के अनुसार परिवार का मूलार्थ है -- परिवार ` परिक्रियते नेन परि-वृ-करणे ` घञ् ` अर्थात एक ही कुल में उत्पन्न और परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध रखने वाले मनुष्यों का समुदाय ` १८

(५) ` हिन्दी विश्वकोश ` के अनुसार --- ` परिवार साधारणतया पति-पत्नी और बच्चों के समूह को कहते है, किन्तु दुनिया के अधिकांश भागों मे वह सम्मिलित वास वाले रक्त संबंधियों का समूह है जिसमें विवाह और दत्तक प्रथा व्दारा स्वीकृत व्यक्ति भी सम्मिलित हैं। सभी समाजों में बच्चों का जन्म और पालन - पोषण परिवार में होता है। बच्चों का संस्कार करने और समाज के आचार व्यवहार से उन्हें दीक्षित करने का काम मुख्य रूप से परिवार में होता है। इसके व्दारा समाज की सांस्कृतिक विरासत एक से दूसरी पीढी को हस्तांतरित होती है। व्यक्ति की सामाजिक मर्यादा बहुत कुछ परिवार से ही निर्धारित होती है। नर - नारी के यौन सम्बन्ध मुख्यत: परिवार के दायरे में निबध्द होते हैं ` १९

(६) ` मानक हिन्दी कोश ` के अनुसार --` परिवार परि+वृ (ढकना) + घञ् अर्थात (अ) एक ही पुरुष के वंशज (ब) एक ही घर में और विशेषत: एक कर्ता के अधीन या संरक्षण में रहनेवाले लोग ` २०

(७) ` वैदिक इण्डेक्स ` - के अनुसार ` वेदो में कुल तथा परिवार शब्द

---

१८ नगेंद्रनाथ वसु और विश्वनाथ वसु - हिन्दी विश्वकोश - त्रयोदश भाग - १९२७

१९ नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, हिन्दी विश्वकोश, खण्ड - ७ पृ.११७, प्रथम संस्करण, १९३६

२० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग - मानस हिन्दी कोश -- तीसरा खण्ड -- पृ.४२७, इ.स.१९६४

की विस्तृत व्याख्या की गई है। यह घर अथवा आवास और घर से सम्बन्ध होने के रूप में अजहलदाणा स्वयं परिवार का द्योतक है। गोत्र से अलग कुल से परिवार का संकुचित अर्थ प्रतीत होता है। जिसमें सभी सदस्य एक ही घर में अविभक्त कुटुम्ब के रुप में रहते थे `२१

इससे स्पष्ट होता है कि गोत्र, कुल, कुटुम्ब और परिवार शब्द परस्पर भिन्नार्थी है। कुल से तात्पर्य सम्पूर्ण वंशपरम्परा से है। जब कि परिवार निकटतम रक्त सम्बन्धियों का समुदाय है। गोत्र शब्द का अभिप्राय स्वयं में अतिव्याप्त है। और कुटुम्ब शब्द भी परिवार शब्द की अपेक्षा अधिक विस्तृत ज्ञात होता है। भारतीय वाङ्मय में परिवार और उसके समानार्थी शब्दों का गहन विवेचन किया गया है।

हिन्दी परिभाषाएँ -- (आधुनिक) --

(१) ` डॉ. डी.एन.मजूमदार` की परिवार सम्बन्धी परिभाषा सार्थक है -- ` परिवार व्यक्तियों का एक समूह है जो कि एक छत के नीचे निवास करता है और जो मूल और रक्त सम्बन्धों से जुडे हुए है तथा स्थान, रुचि और कृतज्ञता की अन्योन्याश्रितता के आधारपर जाति की जागरुकता रखते हैं` २२

(२) ` श्रीमती इरावती कर्वे ` के अनुसार -- ` संयुक्त परिवार उन व्यक्तियोंका समूह जो साधारणतया एक मकान में रहते हैं, जो एक रसोई में पका

---

२१ मैकडोनेल और कीथ वैदिक इण्डेक्स -- पृ.१८६ -
अनुवादक -- रामकुमार राय।

२२ डॉ. डी.एन. मजूमदार -- भारतीय संस्कृति के उपादान --
-- पृ.सं.५१

भोजन करते हैं, जो सामान्य सम्पत्ति के स्वामी होते हैं और सामान्य उपासना में भाग लेते हैं तथा किसी प्रकार एक दूसरे के रक्त संम्बन्धी हैं "२३

(३) ' आई.पी.देसाई -- के " --- हम उस परिवार को संयुक्त परिवार कहते हैं, जिसमें एकाकी - परिवार से अधिक पीढियों के सदस्य सम्मिलित हों तथा उनके सदस्य एक दूसरे सम्पत्ति आय तथा पारस्पपारिक अधिकारों के व्दारा सम्बन्धित हो " २४

उपर्युक्त परिभाषाओं में इरावती कर्वे एवं आई.पी.देसाई इन दोनों की परिभाषा यह संयुक्त परिवार सम्बन्धी है। उन्होंने एकाकी परिवार से संयुक्त परिवार को कुछ अलग माना है --

अँग्रेजी परिभाषाएँ --

अँग्रेजी में परिवार का पर्यायवाची शब्द है -- ' फैमिली ' जिसकी मूलधातु लैटिन शब्द में है। फैमिली का अर्थ है "Domestic Group " ' इंटरनैशनल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ दी सोशल साइन्सेस ' - के अनुसार ' परिवार और कुटुम्ब परस्पर भिन्न है। कुटुम्ब का तात्पर्य है ऐसे व्यक्तियों का समूह जिसमें रक्त सम्बन्ध आवश्यक न भी हो और परिवार का तात्पर्य है वह कौटुम्बिक समूह जो अभ्यासगत रुपसे सहनिवास तथा सहभोज करता हो। "२५

---

२३ प्रेमचन्द परम्परा की कहानियों में पारिवारिक एवं सामाजिक चित्रण - -- पृ.सु.६३ - डॉ.राजेंद्र कुमार शर्मा - ' डॉ.राजेंद्रकुमार शर्माजी के प्रस्तुत किताब में इरावती कर्वेजीकी उपयुक्त परिभाषा परिवार संबन्धित है।

२४ --- वही ----

२५ David L.Sills - International Encylopaedia of the Social Science, Vol.3.P.304.

रांगेय राघव परिवार और कुटुम्ब में भेद करते हुए लिखते है --

" परिवार पति - पत्नी का होता है, पर हमारे यहाँ बडा परिवार होता है जो कुटुम्ब कहलाता है।"[२६]

पाश्चात्य प्रभाव के कारण ही आज के व्यावहारिक जीवन में परिवार शब्द से केवल पति-पत्नी और उनकी संतान का अर्थ ग्रहण किया जाता है। जो इस शब्द का धीरे धीरे अर्थ संकोच होता चल जा रहा है। और कभी कभी केवल पत्नी के पर्यायवाची रुप में प्रयुक्त होता है।

परिवार संबंध में अनेक देशी तथा विदेशी समाजशास्त्री यों ने भिन्न भिन्न परिभाषाएँ प्रस्तुत की है --

(1) "Encyclopaedia Britannica " ---

"The family is here defined as a social group, consisting of one or more, men living normally in the same habitation with one or more women, and the childern, atleast during their youth that have resulted Or appear to be connected with their union"[27]

(2) " एनसाइक्लोपीडिया अमेरिका --" चार लक्षान निरुपित है। ....

"The following four characteristics are common to families everywhere and the included in the definition of the family :-

---

२६ रांगेय राघव - कब तक पुकारूँ - पृ.सं.४८३

27 Encyclopaedia Britannica, Vol.9,- 1947.

(i) The members are related by marriage, blood or adoption ;

(ii) The live together under one roof, or if apart, consider the house hold as their home ;

(iii) They communicate with each other in terms of their respective social roles, such as mother, father, husband, wife, daughter, son, brother and sister;

AND

(iv) They create and maintain common customs and traditions. A family, it will be seen, differs from a marriage, for marriage is simply a socially sanctioned union of one or more men with one or more women for the purpose of controlling mating, where as, whereas the family, involves inter-action between parents, between parents and childern and between the childer "[28]

(३) " परिवार उस समूह का नाम है जिसमें स्त्री-पुरुष का यौन सम्बन्ध पर्याप्त, निश्चित और इनका साथ इतनी देर तक रहे जिससे संतान उत्पन्न हो जाये और उसका पालन - पोषण भी किया जाये " [२९] --

-- मैकाइवर

---

28 The Encyclopaedia American - Vol.II, Page No.3.

२९ महेंद्रकुमार जैन - हिन्दी उपन्यास में पारिवारिक चित्रण -

पृ.५

(४) " परिवार एक सामाजिक समूह के रुप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके सदस्य रक्त संबंधों व्दारा बध्द होते हैं --
-- वील्स तथा हाइजर

(५) " परिवार उन व्यक्तियों के समूह को कहते है जो विवाह, रक्त संबंध या गोद लेने व्दारा परस्पर संबन्ध हो और जिन्होंने परस्पर मिलकर एक गृहस्थी का निर्माण किया हुआ हो और साथ ही जो पति-पत्नी के रुप में माता-पिता के रुप में, पुत्र व पुत्री के रुप में, भाई - बहन के रुप में अपने - अपने सामाजिक कार्यों के क्षेत्र में एक दूसरे के साथ अन्त: सम्पर्क रखें और इस प्रकार एक सर्वसामान्य संस्कृति का सृजन कर उसे कायम रखें"[३०] -- बर्गेस तथा लॉक

(६) " एक परिवार समूह, पुरुष स्वामी, उसकी स्त्री तथा स्त्रियों और उनके बच्चों को मिलकर बनता है और कभी कभी इनमें एक या अधिक अविवाहित पुरुषों को भी सम्मिलित किया जा सकता है --"[३१]
-- बर्गेस तथा लॉक

(७) " बच्चों या बिना बच्चों वाले एक पति-पत्नी के या किसी एक पुरुष या एक स्त्री के अकेले ही अपने बच्चे सहित एक थोडे बहुत स्थायी संघ को परिवार कहते हैं"[३२] जुकरमैन

उपर्युक्त परिभाषाओं में न्यूनाधिक मतभेद दिखाई देता है। मैकाइवर ने परिवार का तात्पर्य स्त्री-पुरुष के निश्चित यौन - सम्बन्ध और अपनी सन्तानों

---

३० महेंद्रकुमार जैन - हिन्दी उपन्यास में पारिवारिक चित्रण - पृ.५

३१ महेंद्रकुमार जैन - हिन्दी उपन्यास में चित्रित परिवार - पृ. ६

३२ महेंद्रकुमार जैन - हिन्दी उपन्यासों में चित्रित परिवार - पृ. ६

के भरण-पोषण से ही ग्रहण किया है। वील्स और जुकरमैन के अनुसार भी परिवार के एक भौतिक आवश्यकता है अथवा वह एक सामाजिक दायित्व है। तो डॉ. मजूमदार ने परिवार का वास्तविक अर्थ ग्रहण करने का प्रयत्न किया है, किन्तु वे भी परिवारगत सांस्कृतिक एकता की उपेक्षा सी कर गये हैं। इस दृष्टि से वर्गेस तथा लोक की परिभाषा सर्वांगपूर्ण कही जा सकती है। इन विद्वानों ने परिवार के रक्त-सम्बन्ध, साहचर्य-भाव और साथ ही परिवार के सांस्कृतिक परिवेश का पूर्ण उल्लेख किया है। एनसाइक्लोपिडिया ब्रिटानिका में भी परिवार का अव्याप्त अर्थ ग्रहण किया गया है, जो केवल पाश्चात्य दृष्टिकोण का ही द्योतक है। परिवार सम्बन्धी विस्तृत मीमांसा एनसाइक्लोपीडिया अमेरिका में प्राप्त होती है।

उपर्युक्त विभिन्न परिभाषाओं की न्यूनता का परिहार कर परिवार को यों परिभाषित किया जा सकता है ---

(८) ' परिवार एकाधिक व्यक्तियों का वह समूह है जो विवाह या रक्त सम्बन्ध के कारण पारस्परिक हितचिन्तन करते हुए साहचर्यभाव से एकही घर में रहकर वैयक्तिक विकास करने के साथ साथ परिवार के व्यक्तित्व का भी निर्माण करता है '[३३]

सारांश रुप में हमने परिवार सम्बन्धी परिभाषाओंकी चर्चा की है, उसमें यही दृष्टिगोचर हुआ है कि परिवार में रक्तसम्बन्धी यों के साथ साथ आत्मीयता से, अपनापन से रहनेवाली सदस्य भी उस परिवार के अंग माने जा सकते है।

---

३३ महेंद्रकुमार जैन - हिन्दी उपन्यासों में चित्रित परिवार - पृ.६

परिवारों का वर्गीकरण --

परिवार एक सार्वभौमिक संस्था है, इसलिए उसमें एक रुपता दिखाई नहीं देती। विभिन्न देशों की विभिन्न परिस्थितियों और विभिन्न जातियों के अन्यान्य धार्मिक सामाजिक, आर्थिक दृष्टिकोण के अनुसार परिवारों का वर्गीकरण निम्नलिखित रुप से किया जाता है --

(१) पितृमूलक - परिवार --

इस प्रकार के परिवारों में पिता प्रधान होता है और वंश भी पिता के नामपर ही चलता है। वह सम्पूर्ण परिवार का प्रबन्ध करता है और परिवार के सभी सदस्य पिता के प्रभुत्व को मानते हैं। स्त्री विवाहोपरान्त पति के घर चली जाती है मगर स्त्रियों की अपेक्षा इस प्रकार के परिवार में पुरुषों को अत्यधिक महत्व रहता है एवं उनके हाथों में ही सत्ता रहती है। आजकल पितृ प्रधान परिवार ही अधिक प्रचलित है, सभी देशों में इनकी प्रधानता है।

(२) मातृ-मूलक परिवार --

मातृमूलक परिवार आज की अपेक्षा प्राचीन काल में अधिक थे। परिवार में माता ही प्रधान होती है और वंश उसी के नाम से चलता था। शेष सभी सदस्य माता के शिरोधार्य का सौभाग्य अनुभव करते थे और पुरुष की अपेक्षा स्त्री को अत्यधिक महत्व रहता। पति - पत्नी के घर रह सकता है या कभी कभी आकर परिवार में पत्नी से मिल सकता था। इसमें बहन की सन्तान भाई की सम्पत्ति की अधिकारिणी होती है भारत में कम जगहों पर ही यह परिवार

पाये जाते हैं जैसे मालबार और आसाम जैसे देशो में दिखाई देते हैं।

(३)(क) एक पत्नी परिवार --

इसमें पति केवल एक पत्नी वरण कर सकता है। दूसरी पत्नी प्रथम पत्नी की मृत्यू या सम्बन्ध विच्छेद करने पर ही की जाती है। प्राय: सभी सभ्य समाजों में इसीप्रकार की पारिवारिक व्यवस्था की प्रधानता है और सामायिक परिस्थितियों के बदल जाने के कारण लगभग सम्पूर्ण संसार में इसी प्रकारके परिवार अधिक पाये जाते है।

(ख) बहुपत्नीत्व परिवार --

ऐसे परिवार में पुरुष एक से अधिक पत्नीयाँ रख सकता है। मध्यकाल में इसप्रकार के परिवार बहुत संख्या में हो गये थे। मगर आजकल कुछ जातियों में ही यह परिवार कानून सम्मत माने जाते हैं नहीं तो कानून की दृष्टि से आज एक से अधिक पत्नी करना गुनाह माना जाता है।

(ग) बहु-पतित्व परिवार --

इसमें एक पत्नी के कई पति हो सकते हैं। यह स्थिति मुख्यत: तब होती है, जब स्त्रियों की संख्या समाज में कम हो या घोर विपन्नता की स्थिति हो। भारत में इस प्रकार के परिवार 'डोडा' जाति में पाये जाते हैं।

(४)(अ) एकाकी परिवार --

यह परिवार का सबसे छोटा रुप है। इसमें पति-पत्नी और उनके अविवाहित बच्चे आते है। यह परिवार बाहरी सम्बन्धियों से मुक्त रहता है। पति-पत्नी के नि:सन्तान होनेपर दत्तक पुत्र भी उस परिवार

का सदस्य होता है। आधुनिक युग में ऐसे परिवारों की संख्या सर्वाधिक है। संयुक्त परिवार के विघटन के फलस्वरुप एकाकी परिवारों की संख्या बढ रही है। आधुनिक हिन्दी उपन्यासकारों का इस प्रकार के परिवार के प्रति अधिक झुकाव है।

(ब) संयुक्त परिवार --

संयुक्त परिवार में बहुत से सदस्य एकसाथ रहते है। इसका संचालन परिवार का मुखिया करता है, जिसे परिवार का कर्त्ता कहा जाता है। वह पारिवारिक सदस्यों में स्नेह भाव बनाए रखता है, आर्थिक व्यवस्था करता है, एवं झगडों को निपटाता है, तथा परिवार के बाहर के कार्यों को भी देखता है। परिवार के मुखिया की पत्नी परिवार की अन्य स्त्रियों में प्रमुख मानी जाती है, वह आन्तरिक कार्यों की देखभाल करती है। संयुक्त परिवार में परिवार के नियमों एवं आचार - विचारों के अनुसार ही हर सदस्य को चलना पडता है इन परिवारों की संख्या गाँवों में दिखाई देती है। संयुक्त परिवार के सम्बन्ध में यह परिभाषा की जाती है --- " हम उस परिवार को संयुक्त परिवार कहते हैं जिसमें मूल परिवार से अधिक पीढियों के सदस्य सम्मिलित हों तथा उनके सदस्य एक दूसरे से सम्पत्ति आय तथा पारस्पपारिक अधिकारों एवं कर्तव्यों के व्दारा सम्बन्धित हों" ३४

---

३४ महेन्द्र कुमार जैन, हिन्दी उपन्यासों में पारिवारिक चित्रण - पृ.सं.१८

लेकिन औद्योगिकरण एवं नागरीकरण के कारन संयुक्त परिवार टूटने लगे हैं और एकाकी परिवार बढ रहे हैं। संयुक्त परिवार की सोचली स्थिति प्रस्तुत करने में आज के आधुनिक उपन्यासकार जागरूक हो रहे हैं।

सारांश --

रुप में उपर्युक्त विवेचन से हम यही कह सकते हैं कि परिवार मानव जाति की महत्वपूर्ण संस्था है, मानव जाति में उसका महत्व अन्यन्य साधारण है। प्राचीन काल से ही यह संस्था किसी न किसी रुप में विद्यमान है। विभिन्न देश एवं प्रदेशों के अनुसार एवं समयके अनुकूल उसमें परिवर्तन होते आये हैं मगर फिर भी मनुष्य जाति के लिए वह आवश्यक है। परिवार सम्बन्धी भारतीय एवं पाश्चात्य अवधारणाएँ भी हमने देखी है मगर दोनों में भी परिवार का महत्व अपने अपने स्थान पर कोई न कोई मूल्य रहता है। पाश्चात्य एवं भारतीय परिभाषाओं में परिवार सम्बन्धी जितनी भी परिभाषाएँ तैयार की गयी है उनमें भी समानतत्व मौजूद है -- एक ही छत के नीचे साहचर्य भाव से जो सदस्य आत्मीय सम्बन्ध एवं रक्तसम्बन्ध से नजदीक रहते है, उनके सम्मिलित स्वरुप को परिवार कहा जाता है।

प्राचीन कालसेही यह संस्था अस्तित्व में थी इसलिए परिवार के विविध रूप भी रहे है मगर आधुनिक काल में उसमें से एकाकी परिवारनेही महत्वपूर्ण स्थान मानवजाती में पाया है। फिर भी ` परिवार ` मनुष्य जाति के लिए कल्याणकारी है।

परिवार का महत्व --

भारतीय एवं पाश्चात्य धारणाओं के अनुसार अंत में यही दिखाई देता है कि मनुष्य के जीवन में परिवार का अत्यधिक महत्व है। परिवार समाज की

सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई है, वह समाज की अनिवार्य संस्था है। मानवजीवन के प्रारंभ से परिवार उसके साथ है, उसके बिना समाज एवं राष्ट्र निर्जीव तथा निष्प्राण है। मनुष्य का जन्म और उसका विकास परिवार में होता है। परिवार के प्रसार से ही राष्ट्र निर्माण होता है। समाज रुपी भवन की नींव में परिवार ठोस पत्थर की तरह लगा हुआ है।

परिवार ने ही मानव जीवन में सुख और शान्ति का संचार किया है। जीवन का आनन्द और जीवन में रुचि का कारण एक सीमा तक परिवार ही है जहाँ मनुष्य अपनत्व, ममत्व पाता है। यदि मनुष्य ने परिवार को खो दिया तो वह स्वयं खो जाता है। परिवार मानव जाति में आत्मसंरक्षण, वंशवर्धन और जातिय जीवन के सातत्य को बनाए रखने का प्रधान साधन है। मनुष्य मरणधर्मा है, किन्तु — मानव जाति अमर है, व्यक्ति उत्पन्न होते हैं, बचपन, यौवन और बुढापे की अवस्था भोगकर समाप्त हो जाते है, पर वंश परंपराव्दारा उनका संतान क्रम अविच्छिन्न रुपसे परिवार के माध्यम से चलता है। मृत्यू और मृतत्व दो विरोधी वस्तुओंका समन्वय परिवार कहता है। व्यक्ति भलेही मर जाएँ, पर परिवार और विवाह व्दारा मानव जाति अमर है[३५]। परिवार के माध्यम से सन्तानोत्पत्ति व्दारा मनुष्य वंशजों के रुप में अनन्तकाल तक जीवित रह सकने में समर्थ हो सका है। बालक परिवार में ही सर्वप्रथम सामाजिक सद्गुणों अर्थात् सहनशीलता प्रेम, त्याग, सहयोग, सहानुभूति, कर्तव्य आदि का पाठ सीखता है। परिवार से ही उसकी शिक्षा प्रारंभ होती है। परिवार यह एक भविष्य को जन्म देनेवाला उद्गम स्थान है। परम्परा के व्दारा परिवार का सम्बन्ध भूतकाल से रहता है।

---

३५ महेंद्रकुमार जैन - हिन्दी उपन्यासों में पारिवारिक चित्रण --
-- पृ.सं.१०

परिवार में मनुष्य के अहं की भी तुष्टि होती है। जो बाहर संसार में बहुत कम संभव हो पाता है। आत्मप्रदर्शन का प्रथम अवसर मनुष्य परिवार में ही पाता है, परिवार में ही विनम्रता से सीखता है। समाज में रहते समय ईमानदारी, सत्यता, आज्ञापालन, परोपकार और सहयोग से कैसे रहना चाहिए आदि के बारे में जानकारी उसे बालपावस्था से ही परिवार के कारण मिलती है और भविष्य में इन गुणों का व्यावहारिक जीवन में उपयोग करता है। बच्चे का व्यक्तित्व सर्वप्रथम परिवार में विकसित होता है और -- परिवार का मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक रुप से बच्चे पर इतना शीघ्र प्रभाव पडता है कि मनोवैज्ञानिकों के अनुसार मनुष्य अपने चरित्र और व्यक्तित्व का निर्माण पाँच वर्ष की आयुतक या उससे भी पूर्व कर लेता है।[३६] परिवार सदियों से समाज की प्रथाओं, भावनाओं और व्यवहारों के ढंगों को अपने में समाहित किए हुए है। इसतरह परिवार में, प्रत्येक को जीवन प्रारंभ करवाने के लिए जैविक मनोवैज्ञानिक और सामाजिक तीनों शक्तियाँ आकर मिलती है।

मानव के कुछ नैसर्गिक संस्कार परिवार की आधारशिला है। जैसे स्त्री-पुरुष का परस्पर आकर्षण एवं सम्बन्ध सन्तानोत्पत्ति, माताकी सन्तान के प्रति निश्चल ममता, पिता की सन्तान के लालन-पालन सम्बन्धी आर्थिक भार वहन करने की प्रबल इच्छा साधारण वासना से लेकर जात्याभिमान तक की भावनाओं का परिवार की स्थापना एवं निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान है।

समाजशास्त्रियों ने सामाजिक संगठन में परिवार को सबसे अधिक महत्व दिया है। परिवार जीवन की प्राथमिक प्रयोगशाला मानी गयी है जहाँ आदर्श

---

३६ कैलाश शम्भु -- समाज-शास्त्र - पृ.सं.३९

मनुष्यों को निर्माण किया जाता है। परिवार व्यक्ति और समाज के बीच की कडी है। बिना परिवारों का समाज अचाट समुद्र की भाँति है। परिवार मनुष्य को सामाजिक, आर्थिक और शारीरिक सुरक्षा प्रदान करता ही है, इसके अतिरिक्त यौन सम्बन्धों की भी इसमें सुव्यवस्थित और संयमित रुप से पूर्ति होती है, यद्यपि यह आवश्यकता परिवार से शहर भी पूर्ण हो सकती है, तथापि समाजब्दारा मान्य नहीं है। वास्तव में --

परिवार सुरक्षाओं का स्वर्ग है जिसमें इसका सदस्य आराम तथा बाह्य संसार की समस्याओं और प्रयोगों से सुरक्षा का आश्वासन पाता है। "३७

परिवार संस्था स्थायी होती है, पुरुष और स्त्री का रहना निश्चित हो जाता है और उन्हीं से मानव संस्कृति की शुरुवात होती है और मानव व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

इस प्रकार मानव जाति में परिवार का महत्व अत्यधिक है और उसका अपना यह महत्व अमर रुप से चलता आया है, चलता रहेगा।

---

३७ डॉ. आशा बागडी - प्रेमचन्द परवर्ती उपन्यास साहित्य में -- पारिवारिक जीवन -- पृ.सं.६